अतीत की ओर...

वर्ष : 02 , अंक : 09, अगस्त – सितंबर 2024

प्रमिला

माँ से मातृभाषा तक...

ना रास्ते से पूछेंगे, ना फिजाओं से पूछेंगे
हम तेरे आने की ख़बर, तेरी आहट से पूछेंगे...

- रचनाकोश.in

मूल्य : 20 रुपए | पृष्ठ : 4

ई – पत्रिका उपलब्ध है : www.rachnakosh.in

गुमनाम होती एक पौराणिक रिवाज

- रचानाकोश.in

बच्चे के जन्म पर मंगल गीत गाने और उन्हें आशीर्वाद देने के लिए आए एक विशेष जाति को पवरिया कहा जाता है। हाथ में 'टुमरी सारंगी' और ढोलक लिए ये पवरिया हर उस घर में जाया करते है जहां नए बच्चे ने जन्म लिया है। इनकी वेशभूषा में घांगरा और घुंगुरू भी होते है। ये मुख्यत: सोहर गीत गाते है। इनकी द्वारा गाए सोहर गीत इतने सुरीले होते है की लोगों को नाचने पर मजबूर कर देते है। आस पड़ोस के लोग और पूरा गांव इनकी गीतों को सुनता और आनंदित होता है। इनकी इस कला को देख कर लोग इन्हें पैसा, अनाज और वस्त्र देते है।

पवरियों के सोहर गीत गाने की परंपरा गांव से शुरू हुई थी। फिर धीरे धीरे इनका रुख शहरों की तरफ हुआ । अमूमन पवरिया को कैसे पता चलता है की किस घर में बच्चा हुआ है ? इसकी भी कहानी बड़ी दिलचस्प होती है । अगर पवरिया बच्चे के मामा के घर आते है तो कहते है कि बच्चे के पापा के घर से आए हैं और अगर पापा के घर आते हैं तो कहते है की मामा के घर से आए है, पर असल में वे आस पड़ोस के लोगों से पूछ कर आते है। पौराणिक कथाओं में भी इन पवरियो का उल्लेख मिलता है। राजा दशरथ के यहां जब चार पुत्रों ने जन्म लिया तब उन्हें आशीर्वाद देने और खुशी मनाने के लिए ये पवरिया अयोध्या के राजभवन पहुंचे थे। राजा दशरथ ने इन्हें सोने के आभूषण, अनाज और वस्त्रों से सम्मानित किया था। दूसरों की खुशी में अपनी खुशी देखने वाले ये पवरिया आधुनिक युग में अपनी परंपरा को संजोने की कोशिश कर रहे है। पवरिया की परंपरा को समाज दिन प्रतिदिन भूलते जा रहा है। आधुनिकता के इस दौर में जहां दिखावा और पैसा ही व्यक्ति की पहचान बन गया है, वहां इन पवरियों की कला को वो सम्मान नहीं मिल रहा । अपना जीवनयापन करने के लिए ये लोग अब रोजगार के नए साधन ढूंढ चुके हैं ।

जब जरूरत ही जिंदगी की पहचान बन जाए तब दो पंक्तियां याद आती है कि...

" चले थे हम खुशियां बांटने इस ज़माने में
पर ये ना पता था की,गम मिलेगा हमें नज़राने में "

नृत्य करते पवरिया

कहीं हम इन्हें भुल ना जाए

गोधन पूजा

गोधन पूजा की दंतकथा के अनुसार ऐसा कहा जाता है कि एक समय कुछ बहनें गोधन कूटने जा रही थी, जिसमें से एक बहन ने कहां की मैं गोधन कूटने नहीं जाऊंगी। कारण पूछने पर उसने कहा कि गोधन कूटने से पहले सभी बहनें अपने भाई को शरापति है, ऐसा करना मुझे ठीक नहीं लगता। मैं अपने भाई को नहीं शरापूंगी। मैं अपने भाई को बहुत प्यार -दुलार करती हूं। जब सभी बहनें गोधन कूट कर वापस आई दो देखा कि उन सभी बहनों के भाई जीवित थे और उस एक बहन का भाई सोया ही रह गया। तब सभी बहनों ने सलाह दिया की जा कर गोधन को शरापों और माफ़ी मांगो तब तुम्हारा भाई जीवित हो जाएगा । ठीक ऐसा ही हुआ। गोधन कुटाई के बाद उसका भाई जीवित हो गया। तब से ऐसा प्रचलन है कि बहनें सुबह गोधन भईया का पूजा करके अपने भाई को रेगनी के कांट से शरापती हैं और वहां से बजरी लाकर अपनी भाई को खिलाती है। बजरी के प्रसाद में सुखा चना, सुखा मटर, मिठाई, नारियल, कटी मिसरी, बताशा होता है।

नहाय - खाए

नहाय - खाए के साथ छठ महापर्व की शुरुआत होती है। इस दिन से व्रती महिलाएं शुद्धता और पवित्रता के साथ व्रत करने का संकल्प लेती है। इसका प्रमाण हमें पौराणिक कथाओं में भी मिलता है। धार्मिक मान्यताओं के अनुसार, माता सीता ने बिहार के मुंगेर में गंगा किनारे मुद्गल ऋषि के आश्रम में नहाय - खाए के साथ छठ व्रत की शुरुवात की थी। वीर योद्धा दानवीर कर्ण की भगवान सूर्य में असीम आस्था थी। कर्ण रोज घण्टो पानी में खड़े होकर सूर्य देव को अर्ध्य देते थे। ये परम्परा आज भी शाश्वत है। नहाय - खाए के दिन व्रती महिलाएं भी गंगा नदी में स्नान - ध्यान कर भगवान सूर्य को जल अर्पण करती है। इस ख़ास दिन पर लौकी की सब्जी, चने या रहर की दाल और चावल बनाई जाती है।

खरना

एक गांव में दो सगी बहन रहती थी। एक बहन अमीर थी और दूसरी गरीब। निर्धन बहन अपनी अमीर बहन के घर नौकरानी का काम करती थी। रोज शाम को मजदूरी के ऐवज में उसे चोकर मिलता था। हर दिन वो चोकर से टिकरी बनाया करती, आधी टिकरी खुद खाती और आधी भगवान के लिए रख दिया करती। गांव की महिलाओं को छठ व्रत करते देख उसके मन में भी छठ पूजा करने का ख्याल आया। गरीबी के कारण वो ऐसा नहीं कर पाती। रोज की तरह उसने टिकरी को ही खरना का प्रसाद समझ कर आधा खाया और आधा भगवान के लिए रख कर सो गई। उसी रात भगवान ने दर्शन दिया और उससे पूछा," सूतल बाडु की जागल बाडु ?" तब वह बोली " कवना नींदे सूती कवना नींदे जागी।" फिर भगवान ने कुछ खाने के लिए मांगा, उसने वही आधी टिकरी दे दिया। फिर भगवान ने पूछा, "उजरावटा लेबू की पियरावटा । " उसने कहा " पियारावटा। " अगली सुबह जब वो उठी तो देखा की घर का कोना - कोना चमकते सोने की ढेर से भरा हुआ है।

छठ महापर्व

सतयुग से चली आ रही छठ महापर्व की महिमा निराली है। दंतकथा के अनुसार सतयुग में 'सुकन्या ' नामक राजकन्या ने अपने पति च्यवन (जो की अंधे थे) के लिए छठ व्रत किया था। छठी मईया के आशीर्वाद से च्यवन के आखों की रोशनी वापस आ गई। त्रेता युग में मां सीता ने अपने कुल की सुख - शांति के लिए बिहार के मुंगेर में गंगा के किनारे छठ व्रत किया था। वहीं द्वापर युग में यज्ञसेनी द्रौपदी ने भी पांडव द्वारा जुए में गवाएं राजपाट को वापस पाने के लिए छठ व्रत किया था। मां कोशल्या और मां पार्वती ने भी अपने पुत्रों की दीर्घ आयु के लिए छठ व्रत किया था । छठ महापर्व में जिस सिरसोप्ता की पूजा की जाती है, उन्होंने अपनी मां को अपनी पत्नी के दुराचार से बचाने के लिए जंघा में छिपा लिया था । तब से सिरसोप्ता भगवान की पूजा की जाती है और यही मन्नत मांगते है की "पुत्र हो तो सिरसोप्ता जैसा ।"

अतीत की ओर...

इतिहास के पन्नों में...

1864 : जिनीवा में रेड क्रॉस की स्थापना।

1899 : ए. टी. मार्शल ने रेफ्रिजरेटर का पेटेंट कराया।

जब शादियों में सादगी हुआ करती थी

आकांक्षा राज

आजकल की शादियों में फिजूलखर्च और आतिशबाजियों का प्रचलन है। शादियां बस एक दिखावे का जरिया बन गई हैं। इस आधुनिक युग में लोग सोशल मीडिया पर दिखावे के लिए शादियों में अंधाधुन पैसा खर्च करते है। कई प्रकार का व्यंजन बनाया जाता है जिसकी बर्बादी होती है। वही पुराने जमाने की शादियां भारतीय समाज की संस्कृति और परंपराओं का गहरा प्रतिबिंब होती थीं। इनमें सादगी, सामूहिकता और रिवाजों का विशेष महत्व हुआ करता था। शादियां होती तो सादगी से थी, लेकिन लोगों में उत्साह की कोई कमी नहीं रहती थी। उस समय की शादी - विवाह में अलग ही रौनक और मस्तियां हुआ करती थी। उन दिनों शादियां 10 से 15 दिन तक चला करती थी। मोहल्ले की औरते साथ मिलकर सांझा पराती और विवाह गीत गाया करती थीं। ढोलक, मंजीरा, और हारमोनियम की धुन पर लोग ठुमके लगाते थे। विवाह का खाना घर और आस पड़ोस की महिलाएं मिलकर बनाती थी। खाने को केले के पत्ते या पत्तल में परोसा जाता था। जिसका अलग ही आनंद था। शादियां व्यक्तिगत नहीं, बल्कि पूरे परिवार और समुदाय का आयोजन होती थीं। रिश्तेदार और पड़ोसी पूरी शिद्दत से तैयारियों में भाग लेते थे। हर कोई अपनी भूमिका निभाता था, चाहे वह भोजन बनाना हो या बारात का स्वागत करना। वहीं सजावट के लिए स्थानीय चीजों का इस्तेमाल किया जाता था, जैसे फूल, मिट्टी के दीपक और केले के पत्ते। शादी में मुख्य केंद्र भावनाओं और संबंधों पर होता था, न कि धन-दौलत के प्रदर्शन पर।

80's और 90's के दशक में घोड़े और बैलगाड़ियों से जाती थी बारात

बारात उस समय घोड़े और बैलगाड़ियों से जाया करती थी। उसके साथ ही हाथी भी बारात में जाते थे। बारात निकलने से पहले घोड़े, बैल और हाथियों को दुल्हन की तरह सजाया जाता था। सभी बैलों के गले में लगे घंटी की आवाज़ जब एक साथ आती थी तो आकर्षण का केंद्र बन जाता था। घोड़े और बैलगाड़ियों की लम्बी कतार जब एक साथ गांव के कच्चे रास्ते से गुजरती थी तो वो दृश्य मनमोहक होता था। उस समय बरात में शराब और डीजे का चलन नहीं था। उस वक्त बारात की मंडली के साथ लोग अनेक प्रकार के नृत्य करने वालो और बैंड

बाजा को लेकर जाते थे, जिसका धुन शानदार होता था। ये चलन 80's और 90's के दशक में काफी प्रचलित था।

जैसे हीं बारात गांव में पहुंचती थी, सभी बारातियों का स्वागत मीठी मीठी शरबतों से हुआ करता था। फिर बारातियों को किसी बड़े से दालान या गांव के स्कूलों में ठहराया जाता था। साथ ही बाहर खाली जगह में भी बारातियों के आराम के लिए ढेर सारी चौकीयां और जाजीम की व्यवस्था की जाती थी। ये बहुत ही खूबसूरत पल होता था। वो दृश्य बहुत ही सुहावना लगता था। सादा रस्म और सीधे सरल तरीके से उस वक्त शादियां हुआ करती थी। रातभर पूरे मंडली के साथ नाच, गाना, कव्वाली और खूब मस्तियां हुआ करती थी। साथ ही लड़की और लड़के पक्ष में आपस में प्रतियोगिता हुआ करती थी कि कौन सा पक्ष ज्यादा समझदार है। रात भर में शादी की पूरी रस्में होने के बाद अगले दिन भी बारात रुका करती थी, जिसे आम भाषा में मरजाद कहते है।

अगले दिन बारातियों को अच्छे अच्छे पकवान खिलाए जाते थे। पूरे दिन फिर नाच गाना और भी अनेक प्रकार का आयोजन होता था। जब बारात दुल्हन को लेकर दुल्हे के घर आती थी तो उस रात दुल्हे के घर में महिलाओं की एक अलग से महफ़िल लगा करती थी जिसमें नाच, गाना, नौटंकी यही सब चीजें होती थी। इसे गांव की भाषा में कोरिया कहा जाता है। इसमें पुरुषों की अनुमति नहीं होती थी। उन दिनों दुल्हन बिदाई कर पालकी, बैलगाड़ी या तांगे पर आती थी।

पालकी पर बिदाई

उन दिनों लोगों के जीवन में न ज्यादा विकल्प था और न ही उलझने। लोग सुकून और शांति से अपनी जिंदगी गुजारा करते थे। आजकल की भागदौड़ वाली जिंदगी में वो सुकून और वो आराम कहां देखने को मिलता है। उन दिनों शादी का खर्च अक्सर सामूहिक रूप से उठाया जाता था। संपन्न लोग गरीब परिवारों की मदद करते थे। विवाह को एक पवित्र संस्कार माना जाता था, जिसमें जीवनभर साथ निभाने का वादा होता था। पति-पत्नी के रिश्ते को धर्म और समाज की स्वीकृति मिलती थी।

रेखाचित्र : भाग - 7

हल्दी और रोरी से बना पेंटिंग

आर्टिस्ट का नाम : प्रकाश कुमार
(छोटा तेलपा, छपरा)

वाटर कलर

अतीत की ओर...

इतिहास के पन्नों में...

1908 : शास्त्रीय संगीत गायिका सिद्धेश्वरी देवी का जन्म।

1942 : महात्मा गांधी ने भारत छोड़ो आंदोलन की शुरुआत की।

संत कवि लक्ष्मी सखी : एक परिचय

प्रो. (डॉ.) अमर नाथ प्रसाद
विभागाध्यक्ष, अंग्रेजी विभाग, जगदम कॉलेज, छपरा, बिहार

संत कवि लक्ष्मी सखी महाराज सखी संप्रदाय के प्रवर्तक है। सखी संप्रदाय हिंदू धर्म का एक महत्वपुर्ण अंग है और ईश्वर भक्ति धारा का एक रुप है। इस संप्रदाय के लोग भगवान को पति भाव में पूजते हैं। हम जानते हैं की भक्ति कालीन युग में इश्वर भक्ति की कई प्रशाखएँ प्रचलित थीं जिसमें भक्त कवियों ने भगवान को कई रुपों और भावों में आराधना की है। चैतन्य महाप्रभु ने गीत संगीत के माध्यम से ईश्वर की आराधना की है, तो दूसरी तरफ मीरा बाई ने भगवान को पति रुप में मानकर उनकी पूजा अर्चना की है। संत कवि लक्ष्मी सखी के टेरुवाँ समाधि स्थल के वर्तमान मठाधीश श्री जनार्दन सखी जी (सुरदास जी) है जो बचपन से ही दिव्यांग महान संत है, परंतु ईश्वर की उन पर ऐसी कृपा है कि उन्हें संत कवि के अधिकांश गीत और पद याद हैं। वे स्वयं हारमोनियम बजाते है और भोजपुरी के तमाम पारंपरिक धुनों को, जिन पर बाबा के पद लिखे गए हैं, उनको संगीत के लय और धुन में गाते है। संत कवि लक्ष्मी सखी के अध्यात्म से परिचित कराने का श्रेय एक - दूसरे महापुरुष डॉ. ललन पांडेय, सेवानिवृत प्रधानाचार्य और हिंदी, संस्कृत और भोजपुरी के प्रकांड विद्वान को जाता है जो इसी गाँव के नजदीक क्रेतपुरा बंगरा के निवासी हैं और उन्होंने संत कवि लक्ष्मी सखी के जीवन और साहित्य पर अपना शोध प्रबंध किया है। इन्होंने अपनी डिलीट की उपाधि एक दूसरे संत कवि वियोगी दास पर किया है। इनके दोनों शोध ग्रंथ पुस्तक के रुप में प्रकाशित भी हैं। इन्होंने ही मुझे सर्वप्रथम संत कवि लक्ष्मी सखी के साहित्य से अवगत कराया। साहित्य के प्रोफेसर होने के नाते मुझे इसमें दिलचस्पी बढ़ी। मैं इस आश्रम में बाबा के अध्यात्म और साहित्य को जानने के लिए हमेशा आता रहता हूँ। बाबा की असीम कृपा से मैंने इनके द्वारा लिखे चारो महाग्रंथों का सांगोपांग अध्ययन किया और मैंने यह पाया कि संत कवि लक्ष्मी सखी की रचनाओं में अध्यात्म और काव्य का एक बहुत ही सुंदर संगम है। जिसमें गोते लगाते ही सुधि पाठक आनंद विभोर हो जाते है।

संत कवि लक्ष्मी ने भोजपुरी भाषा में चार महान ग्रंथों की रचना की है जो निम्नलिखित है :

1. अमर सीढ़ी
2. अमर कहानी
3. अमर विलास
4. अमर फरास

संत कवि लक्ष्मी सखी ने अपने अनुभव के आधार पर अपने ग्रंथों की रचना की है और वे मानते हैं की उन्होंने अपने कविताओं को नहीं लिखा है बल्कि स्वयं भगवान ने लिखा है। बाबा का एक पद है जिसमें वह कहते हैं :-

"शब्द आये अमरलोक से, रहे त्रिकुटी में छाय।
सुन्दर पियवा चुन चुन के, दिहलेह लिखाय ॥ "

संत कवि लक्ष्मी सखी ने आत्म चितन और "अपने आप को पहचानने" पर विशेष जोर दिया है और उनका मानना है कि बहुत पढ़ लिख कर और रट कर आप लौकिक परीक्षाएँ तो पास कर सकते हैं, परंतु आत्म दर्शन नहीं कर सकते, जो अध्यात्म की आत्मा है। बाबा लिखते है

"अतना जे पढलिस ते अंग्रेजिया फरसिया।
त काहे ना कौलिस तें आत्मदरसिया ॥ "

*शेष अगले अंक में...

भोजपुरी विशेष

सपनन के दरियाव में....

घाम - सीति से जूझत – जूझत
फटल बेवाइ पांव में।
बाकिर मारत अइनी गोता
सपनन के दरियाव में ॥

दुनिया के बा चाल निराला
बेसुरा हर ताल निराला।
मनवां से मनवां के दूरी
जीत किनाला हार बेचाला ॥
जाने कइसन बेचइनी बा
अपनन के सद्भाव में
बाकिर मारत अइनी गोता
सपनन के दरियाव में....

जग में जे बा जेतने लमहर
ओतने भूख अथाह।
बरगद - बांस के गझिन छांह में
पइस बनवनीं राह ॥
खूब सोहइनी मोथा जस
हँसुआ - खुरपी के दांव में ॥
बाकिर मारत अइनी गोता
सपनन के दरियाव में...

नेह - छोह से नाता टूटल
सजी भाव पकुसाइल।
रोटी - दाल के चक्कर में ना,
कवनो बात बुझाइल ॥
लीट्टी - चोखा आगे रखनी
पुरी - खीर - पोलाव में।
बाकिर मारत अइनी गोता
सपनन के दरियाव में...

महाराष्ट्र ले रोक ना पावल
बहे से पुरवइया।
भेद - भाव अधरो के सहले
लुधियाना में भइया ॥
मान जोगाई माई के हम
खरना के रसियाव में।
बाकिर मारत अइनी गोता
सपनन के दरियाव में.....

- डॉ. ज्ञानेश्वर 'गुंजन'
(बेतिया, बिहार)

साहित्य मासिक

घनश्याम

श्याम से सावन तक...

वर्ष : 02 , अंक : 09 , अगस्त – सितंबर 2024

कभी उसकी आखों में उतर कर देखा था
मैंने जन्नत को बेहद करीब से देखा था...
- रचनाकोश.in

मूल्य : 20 रुपए

ई – पत्रिका उपलब्ध है : www.rachnakosh.in

असमंजस मेरे मन की

हैं, असमंजस मेरे मन की
उलझे जीवन की गुत्थि सुलझाऊं कैसे ?
बेचैन हृदय, कोई डगर जाऊं कैसे ?
अनसुलझे अधरों से मुस्काऊँ कैसे
जठर की भुख रही नहीं,
सुकून की भुख मिटाऊं कैसे?

जीवन क्या है, मृत्यु क्या है ?
ये समझ लाऊं कैसे ?
क्यूँ हैं ? रहस्यमयी ये जीवन
क्यूँ की तृष्णा को बुझाऊं कैसे ?
हाँ! जीवन की गुत्थि सुलझाऊं कैसे ?

शाक्य कूल का मैं कुंवर
राजपाट का लोभ नहीं
धर्म के लिए बिखर जाऊं या मिट जाऊं
इसका कोई शोक नहीं
क्या है ? जीवन का दुःख
क्या इसका कोई तोड़ नहीं ?

नन्हा बालक रोता क्यूँ ?
सुन्दर काया बूढ़ा होता क्यूँ ?
तज कर अपनो की बाहें,
फ़कीरा मस्त मगन रहता क्यूँ ?
मृत्यु की शैया पे कोई सोता क्यूँ ?
ये समझ पाऊँ कैसे ?

हैं, असमंजस मेरे मन की
उलझे जीवन की गुत्थि सुलझाऊं कैसे ?
बेचैन हृदय, कोई डगर जाऊं कैसे ?
अनसुलझे अधरों से मुस्काऊँ कैसे ?

- रानी साह

कितनी जच रही थी आज तुम

कितनी जच रही थी आज तुम
फूलों के बीच महक रही थी आज तुम
वो लट जो तुम्हारे, खेल रहे थे पत्तो से
एक धागे से जैसे सिली हुई थी आज तुम

दिख रही थी काली घनघोर घटा मध्य चंदा सी,
क्यू इतना सज रही थी आज तुम ?
दो नैन तुम्हारे ढूंढ रहे थे, फागुन बीच बदरी को
क्यू इतना बहक रही थी आज तुम ?

माना मैने बोला था की, सजती संवरती हो तो अच्छी लगती हो
पर सच बतलाना क्या मेरे लिए ही साड़ी पहनी थी आज तुम !
कितनी जच रही थी आज तुम
फुलों के बीच महक रही थी आज तुम

- प्रेम शंकर

खुद से अनजान हूँ...

मुद्दत बीत गए मुझे, तुझे देखे हुए।
तेरे लिए अपने हाथों से रोटियां सेके हुए।।

आया तू, जब मैं खुद से अनजान हूँ।
तेरे लिए जलती चिता, सबके लिए श्मशान हूँ।।

पर आज भी तू मेरा राजा बेटा है।
पर किया जो तूने वो मेरे परवरिश पर चपेटा है ।।

तू वहां मनाता रहा मौज, मैं यहाँ रोटी को भी तरसती रही।
निकली न बद्दुआ दिल से, पर आँखे मेरी बरसती रही।।

आज... आज जो तू मेरे नाम पर दान कर रहा है।
ये मेरा नहीं, तू खुद का अपमान कर रहा है।।

देखना चाहती हूं मैं तुम्हें, ये सन्देशा मैंने भिजवाया था।
कुछ मांग न ले मेरी बुढ़ी माँ, ये सोच के तू नहीं आया था।

दोष न दूंगी बहु को मैं, उसकी नहीं मैं तेरी माँ हूँ।
बन न सका तू राम मेरा पर मैं तो तेरी कौशल्या हूँ।।

अगर देख लेती तुझे, कुछ देर, मौत को भी मात दे देती।
सर पर तेरे हाथ रख चिरंजीवी का आशीर्वाद दे देती।।

तेरे साथ न हो ऐसा, प्रार्थना रब से करूंगी मैं।
झूठ ही सही, मेरा बेटा है अनमोल, सब से कहूँगी मैं।

- अलख निरंजन सिंह

युवा कलम की स्याही से...

ज़िन्दगी पर एक किताब लिखेंगे,
उसमें ही अपने सारे हिसाब लिखेंगे,
कुछ बदलते अपनो के लहजे,
कुछ अपने टुटे ख्वाब लिखेंगे,
कुछ अपने हालात लिखेंगे,
उसमें ही हम अपने सारे जज्बात लिखेंगे...

- अंजली सिंह

प्रधान संपादक : अभिनंदन द्विवेदी | सहायक संपादक : अभिनंदन पाण्डेय, अलबेला, चित्रांश श्रीवास्तव, कुलदीप तिवारी | संपादक मंडल : शुभम सोनी, कुश श्रीवास्तव, अंकित शर्मा | संपादकीय कार्यालय : पिठौरी, बनियापुर, सारण – 841301, बिहार | अपनी रचना हमें भेजे : rachnakosh.editor@gmail.com